4680

4680

आनन्द—साहित्यम ला। पुष्प—१६ वां

प्राविनय—शतक

ता—

श्रीसीतारामीय श्रीमथुरादासजी महाराज

श्रीमते हनुमते नमः
श्रीसीतारामचन्द्राभ्यां नमः
❀ श्रीमते रामानन्दाय नमः ❀

[stamp] शोध संस्थान 4680 अयोध्या

अथ

* श्रीसीताराम—विनय शतक *

अर्थात

अनन्त श्रीमन्हाराजाधिराज, सर्वेश्वर, सर्वलोकाधिपति, सर्वलोकशरण्य मार्तण्ड वंशावतंस, श्रीरघुवंशशिरोमणि शिव--शुक--सनकादि सेवित, श्रीसाकेत--पुराधीश, श्रीभरत-लक्ष्मण-शत्रुघ्न हनुमदादि नित्यमुक्त मण्डलो मण्डन, श्रीसीता विहारी श्रीरामचन्द्रजू की विनय मत्तगयन्द छन्दमें वर्णित

जिसको

श्रीसीतारामोपासक अनन्त श्रीमान्स्वामी श्रीबजरङ्गदासजूमहाराज के शिष्य, अनन्त श्रीमान्स्वामी पं० श्रीरामवल्लभाशरणजू महाराज श्रीजानकी घाट के

साधक-शिष्य

श्रीसीतारामीय श्रीमथुरादासजी स्नेहनिधि ने रचा

प्रकाशक-

श्रीसीतारामीय-सेवामंदिरम्

नजरबाग, अयोध्या [उत्तर-प्रदेश]

प्रथम—संकरण

प्रति-१०००

निछावर ० । ३० पैसा

मुद्रक—विरक्त प्रिंटिंग—प्रेस

अयोध्या-[उ० प्र०]

* मेरी—विनय *

मैं बालक था, श्री महाराजजी ने कृपा कर थोडे ही दिन हुए शरणागत लिया था, आप उस समय गुजरात में "वसाई डाभला" गांव में चातुर्मास कर रहे थे, लग भग सं० १६८२ की बात है, इस सेवक को दोहा-चौपाई-छंद प्रबन्ध की शिक्षा प्रदान कर रहे थे। उसी समय विनय-शतक का सर्व प्रथम दर्शन इस दास को हुआ था, श्री महाराजजी उसकी गुजराती अक्षरों में प्रतिलिपि करवा रहे थे, लिखने वाले थे-मेरे गुरु भ्राता श्री सियारामदासजी महाराज [श्री मणीलाल भाई संघवी] जो जैन परिवार के होते हुए भी कट्टर श्री रामभक्त हैं, और अनन्य श्री राम नाम अनुरागी, हैं; आप आज कल मेहशाणा में वस्त्र व्यापार करते हुए श्री रामायण तथा श्री राम नाम का प्रचार भी करते हैं। उनका लिखा गुजराती लिपि में विनय-शतक श्री जनक पुर धाम में अभी भी मेरे पास सुरक्षित है।

श्री महाराजजी उस समय इसका उदाहरण देकर छंद रचना का ज्ञान कराते थे, मैं अबोध बालक समझता तो नहीं था परन्तु आज वह बहुत पुरानी साध पूरी हो रही है, यह भी प्रभु की कृपा।

"सेवा-मन्दिरम्" के निर्माण कार्य के लिये प्रचारार्थ गत पौष महीने में हमारे बडे श्री महाराजजी [श्री

स्वामीजी महाराज] की तिथि पर मैं कटाव गया था, श्री महाराजजी के प्रकाशित-अप्रकाशित सभी प्रिय ग्रन्थों का संग्रह भी 'सेवा-मन्दिरम्' में रहेगा यह भी एक नियम समिति ने बनाया है, उसकी पूर्ति के उद्देश्य में श्रीमहाराजजी का पुस्तकालय अवलोकन करते हुए बहुत ही जीर्ण शीर्ण श्री श्री कर कमलों की लिखी **विनय-शतक** की एक प्रति प्राप्त हुई, उसको जोड़ जाड़ कर किसी प्रकार दूसरी प्रति तैयार की गई और वह, आज "श्रीसीतारामीय-सेवा मन्दिरम्" के उद्घाटन के पावन प्रसंग पर प्रकाशित कराकर आपकी सेवा में समर्पण करने का सौभाग्य प्राप्त कर सका हूँ।

इसका संशोधन कहिये अथवा कहो रूपान्तर भी श्रीमहाराजजी की ही आज्ञानुसार जो कभी इस अधम सेवक को प्राप्त हुई थी तदनुसार हुआ है, इसलिए सभी त्रुटियों के लिये इस दास की धृष्टता ही कारण है, और जो भी भाव-सौंदर्य है श्रीमहाराजजी का ही कृपा प्रसाद है।

इस ग्रन्थ को श्रीमहाराजजी ने श्री मिथिला जी में श्री जनकपुर धाम में सं० १९९३ में रत्न सागर स्थान पर विराजमान होकर निर्माण किया है, उस वर्ष आपने श्री मिथिला जी की परिक्रमा भी की थी, जिसका सांगोपांग वर्णन श्री जू की लेखनी से ही लिखा गया है, जो इसके परिशिष्ट में दिया गया है। परिक्रमा फागुन वदी अमावस्या को प्रारंभ

होती है और फाल्गुन पूर्णिमा को अन्तर्गृही परिक्रमा करके लोग विदा होते हैं। बडा आनन्द और भजन की मस्ती रहती है, सन्तजन और भक्तों की मंडलियां प्रेम मतवाले बनकर जय सिया राम नाम ध्वनि करते हैं, कबीर दोहा गाते हैं, लीला झांकी करते है और जीवन धन्य बनाते हैं, श्री मिथिला अवध का पुरातन प्रेम संबंध प्रत्यक्ष सजीव हो उठता है। श्री महाराजजी ने जब परिक्रमा की थी उस समय के दो पडाव [मुकाम] अब बदल गये हैं, एक तो 'रतवारा' मुकाम नहीं रहा और दूसरा श्रीक्षीरेश्वर के बदले 'पवंता' मुकाम होगया है। श्रद्धा, प्रेम उमंग अभी भी दिनों दिन बढ़ता ही जाता है, कुछ लोग लगभग चार पांच सौ भक्त तो पांच ही दिनों में परिक्रमा पूर्ण कर अन्तर्गृही में एक हो जाते हैं। "श्रीरामानन्द आश्रम" में श्रीदुलहा सरकार का "रंग होरी" में प्रियाप्रियतम के साक्षात्कार का सुख प्राप्त कर प्रति वर्ष कई भक्त कृतार्थ होते हैं। जो अनुभव गम्य ही है।

श्रीमिथिला जी के प्रति श्री महाराजजी की अगाध निष्ठा थी, अपार भावना थी, आपका मिथिला प्रेम तो आपके पदों को पढ़ने से ज्ञात होता है, एक वार श्रीमहाराजजी ने श्रीदुलहा सरकार का शृंगार अपने कर कमलों से किया था; और मुकुट श्री किशोरी जी की ओर झुकाया था, दासने प्रार्थना की-सरकार मुकुट तो जरा तिरछा रह गया है,

श्रीमहाराजजी ने मंद मधुर मुसकाते हुए आज्ञा की-श्री मिथिला में रहते हो इतना भी नहीं जानते, सरकार तो श्री किशोरीजी के ओर सदा झुके ही रहते हैं तब मुकुट का झुक जाना कौन बडी बात है ? यह श्रीमुख वाक्य जब स्मरण होता है अभी भी अन्तर में परमानन्द लहराने लगता है। श्रीमिथिला जी कीं महिमा गाते हुए आपने क्या ही सुन्दर कहा है—

कोटि जनम को कांदलो रह्यो हृदय विच छाय।
श्रीमिथिला जल पाय के, स्वच्छ होय छण मांय॥

आपने अपने नामार्थ के वर्णन में जो अन्ययता श्रीरामपरत्व और श्रीगुरुपरंपरा का ज्ञान गौरव दिखाया है वह अपूर्व तो हे ही, हृदय स्पर्शी भीं है। उसके एक छन्द में श्रीमिथिला महिमा द्योतक भाव लेते हुए अपने नामार्थ का विवरण करना अपरंपार श्रीधाम निष्ठा का परिचायक है। यह "सेवा-मन्दिरम्" भी श्री अवध-मिथिला की एक नई कडी जोडता है, और उसके उद्घाटन प्रसंग पर श्री महाराज जी का युगलधाम निष्ठात्मक विनय-शतक भी प्रकाशित हो रहा है यह भी कोई उनकी ही प्रेरणा का सुमधुर फल है। श्रीधामजनकपुर में "श्रीरामानन्द-आश्रम" और श्री अयोध्या धाम में-"श्रीसीतारामीय-सेवा मन्दिरम्" दोनों इस सेवक के हाथ स्थापना करवा कर "युगल धाम-लीला-"

युगल धाम निष्ठा,, की परिपक्वता प्रदान करना श्रीमहाराजजी की अपरंपार कृपा का प्रत्यक्ष उदाहरण है। दासको युगलधाम में युगल कीर्ति का निमित्त बनाया गया सेवक तो इसी में कृतार्थ है।

श्री महाराज जी के अन्य अप्रकाशित अनेकों ग्रंथ प्रकाश पथमें लाने का प्रयास किया जारहा है, 'भक्ति-मकरंद" 'अर्थ--पंचक' 'उपदेश-मंदाकिनी' इत्यादि शीघ्र ही प्रकाशित होंगे ऐसी आशा है, कोई भी धर्म प्रेमी प्रकाशित करवाना चाहें तो सूचित करने की कृपा करेंगे। चाहेंगे तो उनका चित्र और शुभ नाम भी ग्रंथ में प्रकाशित करवाया जायगा। किसी के पुण्यस्मरणार्थ भी प्रकाशित कर बांटना, ज्ञान---गंगा की आराधना है, और आज तो धार्मिक साहित्य का प्रचार करना कराना कितना आवश्यक है? जब कि अंधाधुन्ध अनर्थ कारी साहित्य का विशाल सर्जन होरहा है। ऐसे समय में सन्त साहित्य का प्रकाशन कर धर्म और सुयश के साथ श्रीरामकृपा से परम कल्याण के भाजन जो चाहें सो बन सकते है।

अन्त में-सभी पाठकों से इस सेवक का नम्र निवेदन है कि यह 'सेवा--मंदिरम्' तो आपकी ही संस्था है, आपके ही प्रिय धाम में आपके ही सम्प्रदाय की शोभा है, आपके ही एक सम्माननीय सन्त की स्मृति स्वरूप है, हमारे गुरुभ्राताओं के लिये यह अपने ही श्री गुरुदेव का गौरव है, श्री महाराजजी

जहां भी रहते थे एक दवा खाना साथ रखते थे, अभी भी कटाव में आपकी निर्माण की हुई हजारों की लागत की औषधियां पडी हैं जो आप गरीब ग्रामीण जनता को निस्वार्थ भाव से देते थे, उस समय तो उस प्रान्त में आप ही निराधार रोगियों के आधार थे, यह "सेवा--मंदिरम्" भी आपकी उस भावना को मान्य देते हुए रोगी दुखी जनता के लिये एक चिकित्सालय खोल रहा है, उसको चलाना सहज काम नहीं है, सुचारु रूप से चलाना चाहें तो प्रतिमास हजारों का खर्च है जो आप ही सब को पूरा करना है, संस्था तो अकिंचन है, निराधार है, उसको पालना पोषना आगे बढाना आपका ही काम है। इसलिये सेवक की प्रार्थना है कि इसे सुन्दर स्वरूप से चलाने के लिये आप सदा सर्वदा प्रयत्नशील रहेंगे तभी यह संस्ला चल सकेगी, तभी आपका गौरव है, शोभा है,

एतदर्थ--मासिक--वार्षिक--अथवा एक कालिक जो भी सहायता आप देना चाहें सहर्ष सूचित करेंगे, आपकी यत्किंचित् सेवा भी स्वीकार की जायगी, आपके एक एक पैसे का सदुपयोग होगा–अन्न-वस्त्र--रुपये-आदि जो कुछ देंगे पक्की रसीद आपको मिलेगी- प्रति वर्ष जो विवरण पत्रिका छपेगी उसमें आय-व्यय का पाई पाई का हिसाब रहेगा-आपका भी शुभ नाम छपेगा-और अधिक सेवा करने वालों का शुभ नाम शिलालेखमें भी अंकित होगा "सेवा--मंदिरम्"

समिति सरकार से रजिस्टर्ड संस्था है, उसकी ओर से सेवक यह निवेदन कर रहा है, आशा है आप अवश्य स्वीकार करेंगे।

एक प्रार्थना और है कि यह पुस्तक प्रतिदिन पाठ करने वाले भक्तों को विना मूल्य मिलेगा। क्योंकि श्रीमहाराजजी का आशीर्वाद है कि—

विनय-शतक सियलाल को, पाठ करै नित नेम।
मथुरादास सो पावहिं, सीतावर पद प्रेम॥

जो इसका श्रद्धा विश्वास पूर्वक नित्य पाठ करेगा वह श्रीसीतारामजी का प्रेमी अवश्य बनेगा। परन्तु जो अपरिचित हैं, पाठ करेंगे अथवा नहीं, यह समझा नहीं जा सकता उनको इसका निछावर ५१,००० एकावन हजार श्रीरामनाम लिखकर देना पड़ेगा। यदि सब प्रेमी श्रीरामनाम लिखकर सेवा-मंदिर में अर्पण करें तो भजन का भजन होगा और प्रसाद में पुस्तक भी प्राप्त होगा, आम के आम और गुठली के दाम चरितार्थ होगा। इस विनय को ध्यान में रखकर ही विनय-शतक मांगने की कृपा करेंगे।

श्रीसीतारामीय-सेवामंदिरम्
नजरबाग-अयोध्या (उ० प्र०)
श्रीजानकी—नवमी
वैसाख शु० ६ सं० २०२४

निवेदक
अवध किशोरदास
श्रीवैष्णव 'प्रेमनिधि'
श्रीजनकपुरधाम निवासी

पठनात्पूर्वम्

अयोध्या के समादरणीय साकेतधामवासी सन्त श्रीसीतारामीय मथुरादासजी महाराज ने "विनय शतक" की रचना करके यह सिद्ध कर दिया है कि भक्तिरस भावुक माधुर्य रस रसोन्मत्त सन्त भी साहित्यिक दृष्टि से उत्कृष्ट एवं सर्वोच्च कोटि की अमर रचनायें करके कवियों में मूर्धन्य बन सकते हैं॥

उनकी रचनाएं जहां भावुक भक्तों को परमानन्द प्रदायिनी, जब मन सन्ताप हारिणी, लोककल्याण कारिणी जनमन मानस मोद संचारिणी हैं, वहां यदि उन्हे काव्य की कठोर कसौटी पर कसी जाय तो वे इस अग्निपरोक्षा मे भी तप्त सुवर्ण को भांति खरी निकल सकती है।

आपकी यह रचना केवल भारतीय जनसाहित्य ही नही श्रीरामानन्द साहित्य की भी अमूल्य एवं अमर निधि है।

हर्ष की बात है कि दिवंगत श्रीस्वामीजी के अमर आराधक ही नही परम सुयोग्य शिष्य श्रीअवध किशोरदासजी श्रीवैष्णव ने श्रीस्वामीजी महाराज की पूर्वोक्त अमर रचना "श्रीविनय-शतक" का प्रकाशन कराकर श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के साहित्य का जो उपकार किया है वह केवल अतीत कालके अमूल्य रत्नपर प्रकाश नहीं डाला है, प्रत्युत वर्तमान और भविष्य कालके गौरवपूर्ण इतिहास के पावन पृष्ठों में एक नवीन अध्याय जोड़कर उसे और भी समृद्धता प्रदान का है।

जिस रचनामें है रुचिर, रामकथा का गान।
आदर उसका सर्वदा, करते हैं विद्वान॥

होरी — विनयावनत

२०२३ विक्रमाब्द — रामगोपाल पाण्डेय 'शारद'

ता० २६।३।६७ ई० — सम्पादक विरक्त हिन्दीसाप्ताहिक

परमपूज्य प्रातःस्मरणीय

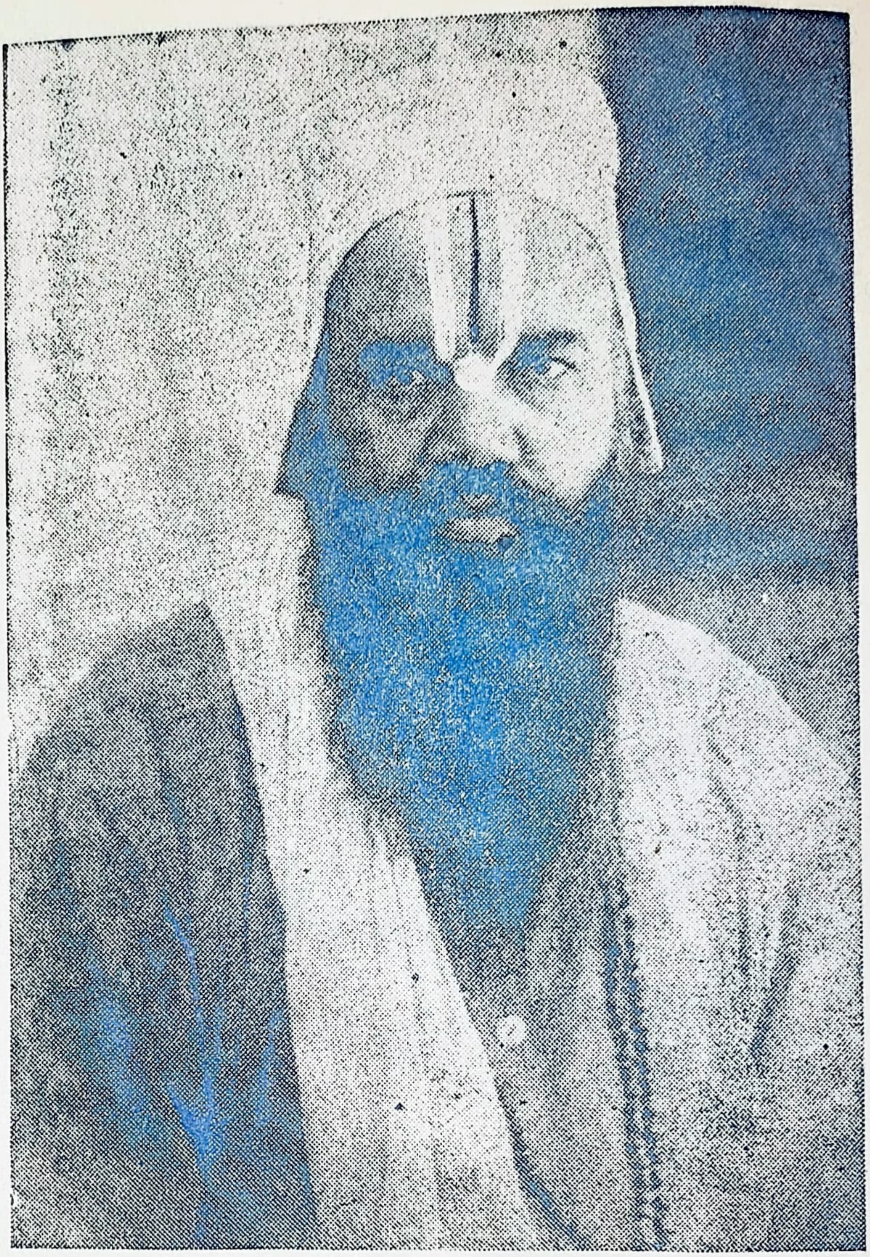

गुजरात के प्रसिद्ध महात्मा युगद्रष्टा सन्त अनन्त श्रीस्वामी

श्री सीतारामीय श्री मथुरादासजी महाराज

श्रीमते—हनुमते नमः
श्री सीतारामौ-विजयेतेतराम
श्री रामानन्दाचार्याय नमः

अथ श्री विनय-शतक प्रारम्भः ॥

[१]

❀ श्री गणेश-विनय ❀

हे जगवन्दन शङ्करनन्दन विघ्न विखण्डन हो सुखदाई ।
श्री गणनायक सन्त सहायक गायक रामसिया यश चाई ॥
मङ्गलरूप अमङ्गल नाशक सिद्धि सुनायक वेद हि गाई ।
मांगत है मथुरा कर जोर श्री रामसिया पद प्रेम सदाई ॥

[२]

❀ श्री सूर्य-विनय ❀

दीन दयालु दिवाकर देव सदा तव नाम सुरोग नसाई ।
मानुष देव सबै मुनि आदि सदा तुमको प्रभु सेवन चाई ॥
शंकर विष्णु विधाता को रूप प्रकाशक वेद पुराणहि गाई ।
मांगत है मथुरा कर जोर श्री राम सिया पद प्रेम सदाई ॥

[३]

❀ श्री शंकर-विनय ❀

हे शिव ! आरत के दुख नाशक दानि शिरोमणि वेदन गाई ।
सिंधु मथे सुर दानव घोर महा विष पान कियो प्रभु जाई ॥
जो जगमें दुखदायक काल त्रिपुरासुर को तुम मारेहु धाई ।
माँगत है मथुरा कर जोर श्री रामसिया पद प्रेम सदाई ॥

[४]

जो गति कष्ट करे मुनि पावत, सो गति कीट पतंगहु पाई ।

सेवक हेतु सदासुर पादप आप उदार उमावर सांई ॥
दीनदयालु अहो प्रभु भिक्षुक भाव सुशान्तहि रूप लखाई।
मांगत है मथुरा कर जोर श्री राम सिया पद प्रेम सदाई ॥

[५]

शीश पै गंग, पिवैं पुनिभंग, पगे प्रभु रंग, असंग-कहाई ।
मंगलरूप, सुसन्तन भूप जु नाम अनूप जपो मनलाई ॥
ईश-उदार मदादिकमार-करो भव पार खड़ा शिर नाई ॥
मांगत है मथुरा कर जोर श्री रामसिया पद प्रेम सदाई ॥

[६]

❀ श्री पार्वति-विनय ❀

शंकर प्राण प्रिया गणनाथ षडानन मात जु हो सुखदाई ।
देवि ! सुरासुर नाग सबै तव पाद सरोरुह मस्तक नाई ॥
भूति प्रदायिनी हो दुखदारिद नाशिनी दिव्यस्वरूप सुहाई ।
मांगत है मथुर कर जोर श्री रामसिया पद प्रेम सदाई ॥

[७]

मंगल मोद सुसिध्दि की धामिनि, हो शुभनामिनि वेद हूँ गाई ।
शूल-कृपाण सुधारिणि दुष्ट विदारिणी कालिका रूप बनाई ॥
भौ दुखटारिणि काम मदादिक हारिणी कारणी हो जगमाई ।
मांगत है मथुरा कर जोर श्री रामसिया पद प्रेम सदाई ॥

[८]

❀ श्री अवध-विनय ❀

धाम शिरोमणी अवध अनूप सदा सरजू शुचि उत्तर धाई ।

जो अवतार शिरोमणि राघव की यह जन्मसुभूमि सुहाई ॥
हे साकेत श्री राम प्रिये तव वास करे लव जन्म न पाई ।
मांगत है मथुरा कर जोर श्री राम सिया पदप्रेम सदाई ॥

[९]

❀ श्री मिथिला-विनय ❀

श्री मिथिलापुरधाम अनूप नमो तव पाद सरोज सुहाई ;
शक्ति शिरोमणि है ममअम्ब सियाजु की जन्म सुभूमि हैगाई ॥
हेमिथिले ! सिय प्राण प्रिये, तव वास करे लव जन्म न पाई ।
मांगत है मथुरा कर जोर श्री रामसिया पद प्रेम सदाई ॥

[१०]

❀ श्री चित्रकूट-विनय ❀

कामद नाथ सुचित्र हो कूट मंदाकिनि गंग लखे अघ जाई ।
रामसिया की विहार सुभूमिहि देखि चलेन कली प्रभुताई ॥
जे नर स्वप्नहि में तव शृंगहि देखत सो भवकूप न आई ।
मांगत है मथुरा कर जोर श्री रामसिया पद प्रेम सदाई ॥

[११]

❀ श्री हनुमत्-विनय ❀

श्री हनुमान महा बलवान दशानन के अभिमान हि तोरे ।
राउर की यशगान कहे मुनि-देव सुजान प्रताप बडो रे ॥
अंजनिनंदन दुष्टनिकन्दन सन्तअनन्दन अज सुनोरे ।
मांगत है मथुरा कर जोर श्रीरामसिया वसु मानस मोरे ॥

[१२]

मारुतनन्दन ये शिशु दीन की हीन दशा पर दृष्टि करो रे।
काममदादिसबै मिलि बांध मोहि बड़ो दुख देत कठोरे ॥
संकट मोचन नाम सुन्यो तुम्हरो प्रभु चरण को शरण गहारे।
मांगत है मथुरा कर जोर श्रीरामसिया वसु मानस मोरे ॥

[१३]

राघव के दरबार हि में वसिला तुंहि छोरि के काहि गहों रे ॥
राउर के पद पंकज छाँड़ि न अन्य को आश भरोस करो रे।
ज्ञाननिधान बड़े सुखदान, कृपामयरूप अनूप लखोरे।
मांगत हैं मथुरा कर जोर श्रीरामसिया वसु मानस मोरे ॥

[१४]

सत्य कहौं प्रभु मोसम या जगमें अघि दुष्ट न कोय बड़ोरे।
पै कपि राऊर को कहवाय जपि तव नाम को पेट भरोंरे ॥
भैया जू हो सु समर्थमहा मम वारहि क्यों असमर्थ भयोरे।
माँगत है मथुरा कर जोर श्री रामसिया वसु मानस मोरे ॥

[१५]

भूत रु प्रेत कुडाकिनि शाकिनी यंत्र कुमंत्र सबै जगटोरे।
भाल कि काल त्रिदोष त्रिताप महा भवरोग को नाश करोरे ॥
संकट मोर सबै करिछार वसावहु पास खबासि चहौंरे।
मांगत है मथुरा कर जोर श्री रामसिया बसुमानस मोरे ॥

[१६]

❀ श्री लक्ष्मण-बिनय ❀

शेष स्वरूप अनूप धरा धरि शीश हि पै मुख राम जपोरे ।
यह जग अन्तक आय तबै उगलो मुख गरल हि छार करोरे ॥
ते जग रक्षण काज विदारण दुष्टन लक्ष्मण रूप धरोरे ।
मांगत हैं मथुरा कर जोर श्री रामसिया बसु मानस मोरे ॥

[१७]

लक्ष्मण हो सुखकंद कटो जग फंद नमो पद द्वंद हि कोरे ।
हे रघुलाल ! बड़े जन पाल यहै भवव्याल सु राखि लियोरे ॥
नाथ ! करि कछु ख्याल यहै लघु बाल को हाल भैया सो कहोरे ।
मांगत है मथुरा कर जोर श्री राम सिया बसु मानस मोरे ॥

[१८]

❀ श्री भरत विनय ❀

श्रीरघुवंश विभूषण कैकई नंदन कष्ट बिखंडन होरे ।
रामसिया पद कंज अली भरत हि जग पोषक नाम सुनो रे ॥
देवन्ह दुर्लभ अवध विभव तजि राम सिया पद नेह कियो रे ।
मांगत है मथुरा कर जोर श्री रामसिया बसु मानस मोरे ॥

[१६]

मांडविनाथ ! बनो मम नाथ गहो शिशु हाथ भैया को सौंपोरे ।
बीर शिरोमणि धीर हरो भवपीर मेरो मनथीर चहोरे ॥
हे रिपुहनअग्रज ! ये शिशु निर्भय गोद बैठाय करोरे ।
मांगत है मथुरा कर जोर श्री रामसिया बसु मानस मोरे ॥

[२०]

❀ श्री शत्रुघ्न-विनय ❀

श्रीरघुनंनदन के लघु भाई तुम्हीं लवणासुर दुष्ट हन्योरे।
तेजनिधान सुजान बड़े रणधीर सदा जनत्रास हरयोरे॥
नाम जपे सब शत्रु विनाशत मानस दोष विनाश करोरे।
मांगत है मथुरा कर जोर श्रीरामसिया वसु मानस मोरे॥

[२१]

❀ श्री किशोरी जू की-विनय ❀

राघव की अति प्राणप्रिया अहलादिनि दिव्य स्वरूप उजोरी।
ब्रह्म रु विष्णु महेश सभीसुर सिध्द सदा बिनवैकर जोरी॥
अंतर में पद पंकज ध्यावत ताकर काम औ क्रोध भगोरी।
मथुरा शिशु को जगदंब सदा अपने पदपंकज पास रखोरी॥

[२२]

सीयसुधारस पूर्ण महा मुखचन्द्र श्री राघव दृष्टि चकोरी।
सो वात्सल्य भर्यो मुखमंडल, नित्य दया करुणा रस घोरी॥
ता मुखसे शिशु मोर अहै एक वार यही मृदु वैन कहोरी।
मथुरा शिशु को जगदम्ब सदा अपने पदपंकज पास रखोरी॥

[२३]

राउरि चेरी की शक्ति प्रचंड ऊहै जग माया को कर्म कठोरी।
सो यहि दीन को देत महादुख डारिके जन्म को फांस करोरी॥
हेमिथिलेश किशोरीजू! सिंहनि के शिशुस्यारिन खान चहोरी
मथुरा शिशु को जगदंब सदा अपने पद पंकज पास रखोरी॥

[२४]

हौं तो सदा शिशु आपहि को सुसनातन सो जननी तुम मोरी।
हे जननी ! मम अप्रिय कर्मं विलोकत हो तब चित्त हटोरी ॥
चरणन की परिचारक वृत्तिअखंडित बुद्धि की वृद्धि करोरी।
मथुरा शिशु को जगदंब सदा अपने पद पंकज पास रखोरी ॥

[२५]

जो सब ईशन को है महेश सदा श्रुति गावत नेति बहोरी।
शंकर ने बहु कष्ट किये विनु मातु कृपा नहि आय मिलोरी ॥
गाथ विख्यात है राघवजू करुणा लखि तोरि सुआवत दोरी।
मथुरा शिशु को जगदंब सदा अपने पद पंकज पास रखोरी ॥

[२६]

मैं अति दीन मलीन अघी सब अंगसों हीन न साधन कोरी।
पै जननी तव नाम हि ले लघु दाम कहायके पेट मरोंरी ॥
जो भव कष्ट सहै शिशु रोवत काहि कहौं अवलंब न मोरी।
मथुरा शिशु को जगदंब सदा अपने पद पंकज पास रखोरी ॥

[२७]

मातजू मैथिली ! लंक निशाचरि ने अपराध किये बहुतोरी।
ते सब को हनुमन्त से राखिके लाघव कौन सभा प्रभु कोरी ॥
काक विभीषण शरण रखे प्रभु आरत होय लगे जब दोरी।
मथुरा शिशु को जगदंब सदा अपने पद पंकज पास रखोरी ॥

[२८]

राउर के पति ये जगको जु पिता हित चित्त सदा ही करोरी ।
जीवको अज्ञपना वशरोष हि देख बुझाय पिया से कहोरी ॥
है जग में निर्दोष न कोय,कही अस वाणि कुबंधन तोरी ।
मथुरा शिशु को जगदंब सदा अपने पद पंकज पास रखोरी ॥

[२९]

हेवरदानन की वरदायिनि ! ये लघु बाल की अर्ज सुनोरी ।
दम्पति चरणन में रति मोरि सदा तव प्रेमिन संग बढोरी ॥
देहु हमें मिथिलेश ललो विनवौं जनि स्वाभिनि मोहि तजोरी ।
मथुरा शिशु को जगदंब सदा अपने पद पंकज पास रखोरी ॥

[३०]

हेजननी शुभ औसर पाय कृपानिधि सों मम अर्ज कहोरी ।
पूछहि तो मम दीन दशा कहियो समुझाय के आप बहोरी ॥
सीयजु राम कृपालहि के सुनते विगरी बनिहै सब मोरी ।
मथुरा शिशु को जगदंब सदा अपने पद पंकज पास रखोरी ॥

[३१]

❀ श्री रामजू की-विनय ❀

नित्य अखंड सदा सुख रूप सुसंत सदा नित नेति हि गाई ।
देवन को वह देव महा सुर संकट हर मानुष तनु धाई ॥
वेद सुबोधित कर्म रु धर्म धरा द्विज साधुन को सुखदाई ।
काहे करो रघुवंशमणी ! मथुरा हि कि वार कृपा कृपनाई ॥

[३२]

हे ऋषि के मख पालक दुष्ट विनाशक नीचन को गति दाई ।
गौतम नारि शिला वश पापहि सो गति दे निजलोक पठाई ॥
श्री मिथिलापुर वासी विदहेजु को धनुतोरि दियो सुख जाई ।
काहे करो रघुवंशमणे ! मथुरा हि कि वार कृपा कृपजाई ॥

[३३]

केवट कोल सखा करते भरते भुज अंकन मैं लपटाई ।
चित्र हिकूट सबै वन दंडक आदि पवित्र किये रघुराई ॥
और विराध कवंध हि मारि खलौ बहु तारहु पामर धाई ॥
काहे करो रघुवंशमणे ! मथुरा हि कि वार कृपा कृपणाई ।

[३४]

गीध अगाध-अघो जग जानत जो निशिवासर आमिष खाई ।
भीलनी जातकी है शबरी जहं शौच अचार न लेश हुं पाई ॥
गीध पिता सम मानि सदा शबरी फल खाये हु मातु कि नाई ।
काहे करो रघुवंशमणे ! मथुरा हि कि बार कृपा कृपणाई ॥

[३५]

दीन सभीत सुकंठ हि सो प्रभु जाई मिले हठि कीन्ह मिताई ।
बालिसंहारि कियो कपिराज यही यश कीर्ति सदा ऋषि गाई ॥
दे बल बुद्धि करायेहु काज भये हनुमान ऋणि रघुराई ।
काहे करो रघुवंशमणे ! मथुरा हि की बार कृपा कृपणाई ॥

[३६]

वैरि को बंधु विभीषण पालि करी करुणा प्रभुजी अधिकाई ।
राक्षस दुष्ट महा अति पापहि रूप रहे जो वडे दुखदाई ॥
रावण घोर निशाचर मारि दई गति अभय किये सुरसांई ।
काहे करो रघुवंश मणे! मथुरा हि की वार कृपा कृपणाई ॥

[३७]

अवध में आय कियो शुभराज सवै ऋषि देवन को सुखदाई ।
दीन महा अपनाय लिया यति श्वान कहे गजराज चढाई ॥
अवध के शूकर कूकर कीट पतंगहु को निजधाम वसाई ।
काहे करो रघुवंशमणे ! मथुरा हि की वार कृपा कृपणाई ॥

[३८]

वारण तारण को प्रभु जो खगराज तजी द्रुत आयेऊधाई ।
पूत को नाम जो लेत अजामिल ताहि दई गति दिव्य सुहाई ॥
मेटि दियो प्रहलाद विषाद कढे नर केहरि खंभतै आई ।
काहे करो रघुवंशमणे ! मथुरा हि की वार कृपा कृपणाई ॥

[३९]

द्रौपदी को पति पांच प्रचंड सभाविच कोय न होय सहाई ।
आशा को त्यागी पुकार कियो दुःशासन से प्रभु आई छुडाई ॥
व्याध अराधन कौन कियो सह देह दियो निज लोक पठाई ।
काहे करो रघुवंशमणे ! मथुरा हि की वार कृपा कृपनाई ॥

[४०]

दीनदयाल दया हि ते केवल ज्ञानिन की गणिका गति पाई ।
मो समदुष्ट अनन्त है तारे रही उनसे कछु प्रेम सगाई ॥
रामकृपाल कृपा करि लीजिय त्यों यह दासहु को अपनाई ।
काहे करो रघुवंशमणे ! मथुरा हि की वार कृपा कृपणाई ॥

[४१]

मैं अति दीन-दयालु हैं आप सुदानि वडे-अति मांगन वारो ।
पापी प्रसिद्ध अहौं जग-आपहैं पातक नाशक श्रेष्ट सुखारी ॥
नाथ हैं आप अनाथन के प्रभु मोसम दीन अनाथन न धारो ।
जैसे हि तैसे हि सीयजूराम रखो शरण हि मथुरा जन तारो ॥

[४२]

मोसम आरत है जग नाहि अहो तुम आरत नाशन हारो ।
मैं हौं गरीब गरीब निवाज अहो तुम ब्रह्म हौं जीव बिचारो ॥
कोशलपाल कृपालुजू एक हि वार कहौ यह बाल हमारो ।
जैसे हि तैसे हि सीयजूराम रखो शरणहि मथुरा जन तारो ॥

[४३]

तातहु मात सखा गुरु भ्रात प्रभो ! तुम भक्तन शोक निवारो ।
स्वामि अहो तुम मैं तव दास अहैं बहु नाते चहो सोईधारो ॥
आप कहो यह दीन कहां तजि जाय सदा पद पंकज प्यारो ।
जैसे हि तैसे हि सीयजूराम रखो शरणहि मथुरा जन तारो ॥

[४४]

आरत दीन कुजाति अहौं मम रोमहु पर खल कोटिक वारों।
पतितन को शिरताज अहों प्रभु पावन पतित है नाम तिहारो॥
लोकहु वेदहु नाम सुख्यात है सत्य करो प्रण जो तुम धारो।
जैसे हि तैसे हि सीयजूराम रखो शरणहि मथुरा जन तारो॥

[४५]

राधव कोशल पाल कृपाल अहै प्रण शरणागत रखवारो।
जूठहु सांचहु लोक कहैं रघुवीर को दास है नाम हमारो॥
लोक बडो-अजि वेद बडो-यह वात प्रभो! मन मांहि विचारो।
जैसे हि तैसे हि सीयजूराम रखो शरणहि मथुरा जन तारो॥

[४६]

नाथ! सुनो मन दुष्ट सदा त्रय ताप जरे दिन राति हमारो।
योगी बने मनभोगी बने कभी रोगी वियोगी को रूप संवारो॥
नहि पावत पारहौं दीन दयालु रहे वश में कोउ यत्न विचारो।
जैसे हि तैसे हि सीयजूराम रखो शरणे मथुरा जन तारो॥

[४७]

मानुष देव सबै मुनि नाग अहै जग साहिब कोटि हजारो;
हैं तबलौ जब लौं न दयामय नैनन सैनन नाहि निहारो॥
आपु विना सचराचर लोक सभी प्रभुदीन दुखी न पुकारो।
जैसे हि तैसे हि सीयजूराम रखो शरणे मथुरा जन तारो॥

[४८]

तीनहु लोक त्रिकाल अहै यश जाहिर वेद कहै नित चारो ।
आदिहु अन्तहु मध्य सदा रसएकहि सोहत श्री जू तिहारो ॥
तेरो भिखारी न होय भिखारी सुख्यात अहै यश संत पुकारो ।
जैसे हि तैसे हि सीयजूराम रखो शरणे मथुरा जन तारो ॥

[४९]

जानत हौं महिमा प्रभु की अरु पाप हमार अनंत अपारो ।
पाप से हारि गयो तब ही सुन्यों नाम पतितन तारण हारो ॥
सो सुनि शील सुभाव वडो यश याचन आयो है बाल तिहारो ।
जैसे हि तैसे हि सीयजूराम रखो शरणे मथुरा जन तारो ॥

[५०]

दशरथ नन्दन नाथ किये तुम रंकन को नृपराय हजारो ।
पाहन वृत्त विहंग किये पशु आपन ये शिशु काहे विसारो ॥
दानि न दूसर आप विना हम दीनन देख्यो न आन दुआरो ।
जैसे हि तैसे हि सीयजूराम रखो शरणें मथुरा जन तारो ॥

[५१]

आप उदार शिरोमणि राम सुन्यो यश संतन सों प्रभु तैरो ।
जाहि कृपा वश व्याध अजामिल से अति दुष्ट किये प्रभुचेरो ॥
सोई कृपा वरसावहु मोपर मैं अति दीन महा दुख घेरो ।
रीझ हि खीझहि के प्रभु एक हुं वार कहो मथुरा शिशु मेरो ॥

[५२]

दोष निधान महा अघ खान जो मानि के मोहि प्रभो ! मुख फेरो
तो निर्लज्ज बडो पद पंकज त्यागि न जैहौं यही प्रण मेरो ॥
और न ठौर कहूँ रघुनन्दन कोशलनाथ अनाथ को डेरो ।
रीझहि खीझहि के प्रभु एकहुँ वार कहो मथुरा शिशु मेरो ॥

[५३]

योनि अनेकन जन्मि किये बहु कर्म अधर्म फिरौं तव प्रेरो ।
मतिमोर अनन्य न जाय कहूँ नतपाल कि वानि सुनाय वडेरो
मदमोह महा रिपु क्रोध मनोज निपाति करो प्रभु मोहि सुनेरो ।
रीझहि खीझहि के प्रभु एकहुँ वार कहो मथुरा शिशु मेरो ॥

[५४]

मंदन को शिर मोर बडो यह जानि जो त्यागहु नाथ अनेरो ।
तो प्रभु की यह कीर्ति ध्वजा फहरे करि क्यों यश शुद्ध घनेरो ॥
जप-योग-विरागहु ज्ञानहुं से पथ प्रेम को मानत आप वडेरो ।
रीझहि खीझहि के प्रभु एकहि वार कहो मथुरा शिशु मेरो ॥

[५५]

हे रघुनाथ अनाथन नाथ वदे मुनि गाथ सदा यश तेरो ।
यवन सो कौन रह्यो जग वाम हराम कहे झट आय मिलेरो ॥
रीति यहो प्रभुता तजि के प्रभु पामर सो कियो प्रेम घनेरो ।
रीझहि खीझहि के प्रभु एकहि बार कहो मथुरा शिशु मेरो ॥

[५६]

दर्शन से प्रभु पामर हूँ पल मांहि बने अति पुण्य बडेरो ।
भाग्यसुवन्त अभागो बने प्रभु मोसम गान करे प्रभु तेरो ॥
अभिमानी बने विनयी पलमें करुणा करिके करुणानिधि हेरो ।
रीझहि खीझहि के प्रभु एकहुँ वार कहो मथुरा शिशु मेरो ॥

[५७]

होत अजान सुजान महा प्रभु मोसम नाम पुकारत तेरो ।
क्रूर-कुटिल अरु कामि बने निष्काम महा करुणा मय हेरो ॥
मोसम वाम बने दाहिने भुलाय गये प्रभु क्यों यह चेरो ।
रीझहि खीझहि के प्रभु एकहुँ बार कहो मथुरा शिशु मेरो ॥

[५८]

आपहि को तजि काहि भजौं ममताजन पै नहि काहु हि हेरो ।
हिरण्यकश्यप है जु विरंचिहि को निजभक्त भयोजु बडेरो ॥
सो विधिने वरज्यों न सुनै दुख देतहि जात सुकाल हि नेरो ।
रीझहि खीझहि के प्रभु एकहुं वार कहो मथुरा शिशु मेरो ॥

[५९]

शंभु को सेवक रावण जो बहु वार दिये निज शीश कटेरो ।
नाथ ! बिरोध किये तुमसों वरज्यो न गिरीशहि जाय सवेरो ॥
स्वारथ मीत सभी सुर ख्यात ये वात विचारत जाऊं न नेरो ।
रीझहि खीझहि के प्रभु एकहुँ वार कहो मथुरा शिशु मेरो ॥

[६०]

या जगमें अस कोऊ ना नाथ पुकारत आरत धाय घनेरो।
गीध-अजामिल-व्याध अनेकन दुष्टन को कहुं कौन उबेरो ॥
जो प्रभु और मिले तुमसों हठ मैं न कभी करतो न करेरो।
रीझहि खीझहि के प्रभु एकहुँ वार कहो मथुरा शिशु मेरो ॥

[६१]

राम ! कृपा निशिवासर चाहत सिद्ध-विरंचि-सुरेश-पुरारी।
दीन दयाल दया करि मानुष देह दियो पुनि लेहु उवारी ॥
प्रेम-दया करुणा-वरसावहु तारहु नाथ सहौं दुख भारी।
हे सियरामजू ये मथुरा शिशु अर्ज्ञहि को रखु पास सम्हारी ॥

[६२]

जीव अनादि अजान वडो सज्ञान बडे तुम वेद पुकारी।
भूली परें यह रीति हमार विसारी हमैं तुम टेक न टारी ॥
याद स्वभाव न आपनो राम लियो नहि नाथ न मोहि उवारी।
हे सियरामजू ये मथुरा शिशु अज्ञहि राखहु पास सुधारी ॥

[६३]

आप कहैं-शठ तोहि सुधारत पै सुधरत नहिं देत विगारी"।
मोरि विगारी न सकहु सुधारी तो मोट कलंक चढ़ो शिर भारी ॥
कौन समर्थ बडो जगमें यह निर्णय आप हि लेहु विचारी।
हे सियरामजू ये मथुरा शिशु अज्ञहि राखहु पास सुधारी ॥

[६४]

मैं प्रभु द्वारहि द्वार पुकारि कहा रद काहि न कोऊ उबारी ।
साहेब हैं जु बडे सब मोसन भाषण नेक किये न विचारी ॥
जानि अभागिजु आलसी मोहि तज्यो निज मात पिता सुखकारी ।
हे सियरामजू ये मथुरा शिशु अज्ञहि रखहु पास सुधारी ॥

[६५]

काहे को काहुहि दोष लगाइय पूरण दोष भयों हौं अपारी ।
मोहि उदास लखी गुरुदेव कहें मनशोचत क्यों तु दुखारी ॥
तो सम तो पशु पामर पापिन को प्रभु शरण गये सुख भारी ।
हे सियरामजू ये मथुरा शिशु अज्ञहि को रखु पास सुधारी ॥

[६]

मोसम आलसि दीन अभागिहि पालत पोषत राम खरारी ।
मालिक हैं रघुबीर मेरे अवधेश नरेश महा बलधारी ॥
शेष गणेश न गौरि दिनेश रमेश महेश न जानों अघारी ।
हे सियरामजू ये मथुरा शिशु अज्ञ हि को रखु पास सुधारी ॥

[६७]

एक उपाय अहै मम राघव नाम सुधा सम और न धारी ।
क्रोध मदादिक वात बिसारि रहौं मन मग्न हैं साथ हमारी ॥
डोरी प्रभु सब हाथ रहे जग चोर की चौकी ऊदार की सारी ।
हे सियरामजू ये मथुरा शिशु अज्ञहि को रखु पास सम्हारी ॥

[६८]

भक्तन देवन आरत हारि करी तुमने सब दिन रखवारी।
राउरि रीति सुनी जब से तब से भई प्रीति प्रतीति हमारो॥
कलि कालको पाप प्रचंड विलोकत डर्यो उरमें यह दीन दुखारी।
हे सियरामजू ये मथुरा शिशु अज्ञहि को प्रभु राखु सुधारी॥

[६९]

आप कृपा करिके प्रभु बोलहु एकहुँ बार मैं हौं बलिहारी।
कलिवंक विलोकनि को लखिके गभराय उठौ शिशु हों तो अनारी
सो कहते बनिहैं कि तुन्हैं कहवावहु औरहु बात हमारी।
हे सियरामजू ये मथुरा शिशु अज्ञहि को रखु पास सुधारी॥

[७०]

है सम्बंधि सगो जग कोय न आपहि मोर पिता महतारी।
सत्य कहौं शिशु तोर सदा तुमसों विगरी सुधरेगी हमारी॥
पै प्रभु राऊर को कहावायजु चाहत राऊर कीर्ति महारी।
हे सियरामजू ये मथुरा शिशु अज्ञहि को रखु पास सुधारी॥

[७१]

रामजू मेरे ये पाप सुनो यदि आप कहैं तुम काहे कहो रे।
सत्य कहे सव माफ करो तुम स्वामि सुभाव ये आज सुन्योरे॥
पर को दुख देखी सुखी मैं सदा विनु आगि जरौं सुनिके सुखियोरे।
ये मथुरा निज पापहि से अब हार खडा प्रभु सों कर जोरे॥

[७२]

भक्ति विराग रु ज्ञान सबै कहि लोगन कूं भरमावत हौं रे।
तब नाम सदा शिव प्राण समो तेहि बेचिके पापी मैं पेट भरौं रे॥
आप मैं पाप को सिंधु महा परदोष मैं बिंदु सो देखि जरौं रे।
ये मथुरा निज पापहि से मन हार खड़ा प्रभु सौं कर जोरे॥

[७३]

पर औगुन रेणु को भूधर सों गुण गिरिवर से रजसों निदरौं रे।
बहु वेष बनाइ के लोग ठगौं धन पाप को पैसोंमैं खूब बटोरे॥
पद पंकज प्रेम सों ना सुमिरों चित चंचल चरणन नाहि डटोरे।
ये मथुरा निज पापहि से मन हार खड़ा प्रभु सों कर जोरे॥

[७४]

फल कान को कीर्ति सुने प्रभु की समुझावत हौं मनमें समुझोरे।
तेहि कानन मो पर दोष सदा हरषाय के चित लगाय सुनोरें॥
रसना नहि राम को नाम रटै पर निंदक पूरी बड़ो बिगरोरे।
ये मथुरा निज पापहि से मन हार खडा प्रभु सों कर जोरे॥

[७५]

धर्म सबै विपरीत करौं प्रभु को मन कौन सो रीत गहौं रे।
जानत-हौं हरि रूप चरा चर सो निरखों नहि नेत्रन सों रे॥
दीप शिखा सम नारि अहै प्रभु नेत्र पतंग पठावहुँ दौरै।
ये मथुरा निज पापहि सों अब हार खडा प्रभु सों कर जोरे॥

[७६]

मन शुद्ध करो-रघुवीर भजो सब पाप तजो यह वात कहौं रे ।
मैं मनमें मद-काम-कठोरहुँ क्रोध हि लोभ हि लाय भरौं रे ॥
बनि मानुष मैं पर लोक विगारऊं लेश न लाज लजाई मरौंरे ।
ये मथुरा निज पापहि से अब हार खडा प्रभु सों कर जोरे ॥

[७७]

प्रिय पाप किये तन से मनसे दिन राति तिन्हें हिय ढांकत हौंरे ।
प्रभु प्रेरित पुण्य कियो पलभार बजाय के डंका सुनावत दौंरे ।
संत समाज में बैठिके बुद्धि-विलास बतावत नाहि लजौं रे ।
ये मथुरा निज पापहि से अब हार खडा प्रभु सों कर जोरे ।

[७८]

वनि निर्भय प्रभु सों मस्त फिरे नहिं मानत सीख भली तनकोरे ।
ये कलि काल कुचालहि को मदिरा करि पान भयो अति बौरे ॥
रामकृपा निधि क्यों करि अर्ज सुनावहुँ मैं अतिशय सकुचोंरे ।
ये मथुरा निज पापहि सों अब हारि खडा प्रभु सों कर जोरे ॥

[७९]

शारद शेष निहोरि कहावऊं दोष अपार कहैं सब मोरे ।
तो शत कल्पहुं पैहैं न पार कहौं मुख एक कहा प्रभु सोंरे ॥
जो करणी समुझै प्रभु मोरि तो राखहु शरण कहूँ नहि ठौरे ।
ये मथुरा निज पापहि सों अबहारि खडा प्रभु सो कर जोरे ॥

[८०]

करि आपकी सौंह कहों जग में नहिं कोई अघी मोसम हि बडोरे
राखु सुधारि कि खूब बिगारहु तुम्हीं दुहुँ ओर विचार करोरे ॥
सांच कहौं प्रभु ढील किये तेरे नाम की नैया तुरन्त हि बोरे ।
ये मथुरा निज पापहि सों अब हारि खडा प्रभु सों कर जोरे ॥

[८१]

हे रघुनाथ जू ! नर्कहुं को डर नाहि मोही कहौं सांचहि सांई ।
क्योंकि यही जगमें प्रभु जीव अनादिहि सों दुख भोगतआई ॥
पर शोच बढो परतंत्र बनों यमके प्रभु दास मैं तोर कहाई ।
द्वार परयो मथुरा हठ ठानि हटों शिशु राउर को कहवाई ॥

[८२]

तोहि तो मोसम हैं बहु राघव मोहि तो आपहि एक सहाई ।
ग्लानि बडो यह है मनमें प्रभु आप बडे सर्वज्ञ सुसांई ॥
क्रूर-कुसेवक-मैं जो सदा प्रभु आपहि सो कोई साहेब नाई ।
द्वार परयो मथुरा हठ ठानि हटों शिशु राउर को कहवाई ॥

[८३]

हे रघुनंदन आपहि के पद पंकज को मनमें हरषाई ।
जो नर शीश नवावत है यदि एकहुँ बार गही शरणाई ॥
सो वह जीवहि को सब पाप नशाय बढावत पुण्य सदाई ।
द्वार परयो मथुरा हठ ठानि हटों शिशु राउर को कहवाई ॥

[८४]

पोच भले हि कहैं जगमें सब रावरो दास बन्यो हौं बजाई।
स्वामि को श्वान बने बिगरे प्रभु गारि तो साहेब के शिरजाई॥
सो अस जानि के आपहि के मन में जस होय करें हरषाई।
द्वार परयो मथुरा हठ ठानि हटों शिशु आपहि को कहवाई॥

[८५]

धर्म न कर्म न ज्ञान न ध्यान न जानहुँ नाथ न भक्ति सुहाई।
मैं तो अनन्य-अकिंचन-पामर हों पद पंकज की शरणाई।
होऊंगो कोय मैं दीनदयालु को विलोकहु आपनि जो विरुदाई।
द्वार पर्यो मथुरा हठ ठानि हटों शिशु आपहि को कहवाई॥

[८६]

आप कि सौंह कहौं प्रभु मैं तव द्वार को छांडिन अन्तहिं जाई।
टारहि ते न टरौं यमदूत सों सत्य कहौं यह ठोकि बजाई॥
आलस में अनखहुँ कहि देहु तूं मोर सदा जन को सुखदाई।
द्वार पर्यो मथुरा हठ ठानि हटौं शिशु आपुहि को कहवाई॥

[८७]

सोचत हैं यदि कष्ट परे यह दीन तों आपुहि सों भगिजाई।
सो न बिचारहु कष्ट सहे बहु संकट देखि जो नर्क लजाई॥
बार हि बार में दुःख सहौं मति मोरि न पाप सों नेकु हटाई।
द्वार परयो मथुरा हठ ठानि हठों शिशु राउर को कहवाई॥

[८८]

हौं हठ धर्मी तजौं हठ नेकु न लैहौं सही प्रभु रार मचाई ।
आप दयालु दिये बनिहैं बलि देर करो न कहौं शिरनाई ॥
दुष्ट शिरोमणि ख्यात कहे सकुचो मनसे प्रभु ल्यो अपनाई ।
द्वार पर्यो मथुरा हठ ठानि हठों शिशु राऊर को कहवाई ॥

[८९]

आप हमैं यदि त्यागहुँ पै हम त्यागि प्रभो तुमको कहां जाई ।
बाल को त्यागि सकै पितु मातु पै जाय कहां शिशु मातु त्रिहाई ॥
त्यों मै अनाथ हौं बाल तुम्हीं बनि नाथ करो शुभ बान सुहाई ।
द्वार पर्यो मथुरा हठ ठानि हठों शिशु राउर को कहवाई ॥

[९०]

जैसे हौं तैसो हौं राउर तो शिशु हौं जनि त्यागु मुझे सुरसांई ।
हो शरणागत पाल अनाथन नाथ लखो अपनो विरुदाई ॥
आप सुधारत हो सबकी प्रभु ये बिगरे की सुधारहुँ धाई ।
द्वार परयो मथुरा हठ ठानि हटो शिशु आपुहि को कहवाई ॥

[९१]

हे सियराम तुम्ही जन रचक होकर काहे को मोहि बिसारो ।
आपको दीन दयाल पतितन पावन बात कहें श्रुति चारो ॥
मैं जु भयो न पतीत किधौं यह बात है वेद मृषाहि पुकारो ।
भवनिधि पार करो रघुनन्दन नेहनिधि शुचि सार तुम्हारो ॥

[६२]

यह कलिकाल बडो यदि होतजु आप निदेशहि ते प्रभु न्यारो ।
तो तव नाम प्रभावहि को तजि तेहि भजतो बनतो न तुम्हारो ॥
मसक विरंचि,बिरंचि मशक सम करत प्रभाव अखंड अपारो
भव निधि पार करो रघुनन्दन नेहनिधि शुचि सार तुम्हारो ॥

[६३]

दोष निलय विष भोग प्रदायक शोक कहे श्रुति संत हजारो
जानत हूँ अनुराग बडो विषयन में है यह काम तुम्हारो ॥
गरल-सुधा सम आगजू हिम करते प्रभु नाम विना भवतारो ।
भवनिधि पार करो रघुनन्दन नेहनिधि शुचि सार तुम्हारो ।

[६४]

आप समान न ईश कहूँ जग खोजत खोजत हौं अब हारो ।
हे सियराम यही जगजालसों कष्ट बडो अब नाथ निवारो ॥
या शिशु को जवही कबही भल हैं सुकृपा विन आश न धारो ।
भवनिधि पार करो रघुनन्दन नेहनिधि शुचि सार तुम्हारो ॥

[६५]

आप पतितहि पावन नाम की लाजहि सों बहु मोसम तारो ।
तो अब वारहिवार हौं रोयके कौन सो दुःख कहो मम भारो ॥
आपहि सदृश को कहुं सौंपहुँ तारहु नाथ न लाज विचारो ।
भौ निधि पार करो रघुनन्दन नेह निधि शुचि सार तुम्हारो ॥

[९६]

जगमें हित कोय न नाथ कहूँ नहिं आपन माय न बाप हमारो ।
सब भाँति सखा गुरुस्वामि खरो हितकारी सदा प्रभु नाम है प्यारो
नर्क परे को न शोच मोहीं बडित्रास है नामहुँ पाप न जारो ।
भवनिधि पार करो रघुनंदन नेहनिधि शुचि सार तुम्हारो ॥

[९७]

हानि बडी यह श्री रघुनन्दन आपहि सों मन खूब विचारो ।
क्योंकि मोरे मनको निज सुंदर रूप सुधारस प्यावहु प्यारो ॥
तो कतधाबत राउर को तजि के पद कंज विषय विष खारो ।
भौ निधि पार करो करुणानिधि नेहनिधि शुचिसार तुम्हारो ॥

[९८]

योनि अनेक सहे दुख दारुण औंर सहौं यह चित्त न धारो ।
मोकहूँ दुर्गम देत तुम्हें अति सुगम सदा प्रभु है फल चारो ॥
और अहै जग मोरे न राघव काहि कहौ मन चाह हमारो ॥
भवनिधि पार करो रघुनन्दन नेहनिधि शुचि सार तुम्हारो ॥

[९९]

प्रभु के कर कंज खिलौना बनों खग वृक्षलता मृग किंकरधारो ।
रामजू आपहि को बनि नर्कहि में सुख या बिनु स्वर्ग न प्यारो ॥
है इतनी मनचाह कृपा करि देहु यही वरदान दयालो ।
भव निधि पार करो रघुनन्दन नेहनिधी शुचि सार तुम्हारो ॥

[१००]

हे सिया, रामजू आप समेत कहौं सबसों मन माँहि विचारो।
रेखहि खैंचि कहौं पद कंज तजे जग कोई कहूं न हमारो॥
ये शिशु दीन कि अर्ज तुम्हीं सब बाँचिके बाप सुधार उधारो।
राम सुभाव सही करि आप कहौ मथुरा शिशु मोर है प्यारो॥

(दोहा)

अब्द ३ लोक ७ मुनि ६ ग्रह १ शशि राम जन्म मधु मास॥
शुक्ल नौमि बुधवार यह पूर्ण जनक पुर खास ॥१॥
श्री मिथिला पुर धाम में सागर रत्न समीप।
विनय कीन्ह पद ध्याय के जो जग तम शुभ दीप ॥२॥
विनय शतक सियलाल को पाठ करै नित नेम।
मथुरा दास सो पावहीं सीतावर पद-प्रेम ॥३॥

इति श्री मन्महाराजाधिराज-सर्वेश्वर-सर्व लौकाधिपति सर्वलोकशरण्य-मार्तण्डवंशावतंस-श्रीरघुवंश-शिरोमणि--शिव, शुक, सनकादि सेवित चरण साकेतपुरवराधीश-श्री भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न, हनुमदादि नित्यमुक्त-मण्डली मण्डन धनुर्बाण धारी-श्री सीता विहारी

श्री रामचन्द्रजू की

विनय-शतक

सम्पूर्ण

श्री सीतारामचन्द्रार्पणमस्तु

❁ परिशिष्ट ❁

❁ श्री मिथिला-महिमा ❁

दोहा

श्री मिथिला बर भूमि है, सीता जन्म अनूप ।
योग भोग महं जहं करै, योगेश्वर नर भूप ॥१॥
कोटि जन्म को कांदलो हृदय थिरान्यो आय ।
श्री मिथिला जल पायके स्वच्छ होत छन मांय ॥२॥

[१]

मिथिला है दिव्य पुर तुल्य नाहीं कौनो और
शिव अज आदि पुर सब ही को गुर है ।
यामें वसे धर्म धुर सियावर भक्ति पूर,
काम क्रोध किये चूर बडे धर्म शूर है ॥
कोटि तीर्थ दान शूर ज्ञान योग भर पूर,
तप व्रत धर्म धूर याके विना धूर है ॥
सिय पिय रस दूर कियो वश चाहै फूर,
"मथुरा" के मन यह स्वामिनि को पूर है ॥

[२]

❁ श्री मिथिला-परिक्रमा ❁

मिथिला की परिक्रमा कौन ऐसो पटु अहै,
महिमा जो कहि सकै प्रेम मय जानिये ।

"श्रीमिथिला-बिहारि" वर ठाकुर जी "कचूरी" में,
परिक्रमा शिर मौर झांकी मन आनिये ॥
"रतन सागर" स्नान करी राम गुण गान,
"हनुमान-नगर" मे रात्रि सुख मानिये ।
फालगुनमास सुदि शुद्ध करी मन-बुद्धि,
हीयराम सुख नाम परिक्रमा ठानिये ॥

[३]

परिवा के दिन सब आय निशि वास करे,
"कल्याण के ईश्वर" हैं शिव लिंग छायजू ।
दूज दिन मन भाय, "गिरिजा-तडाग" जाय,
सीताराम पद अंक भूमि मन ध्याय जू ॥
मृद खनि कुंड आय तीज दिन सुख पाय,
लोकमहं ख्यात नाम "मटिहानी" गायजू ।
चौथ दिन 'जलेश्वर' वास करे नेह भर,
सीताराम गुणगान गावै हरषाय जू ॥

[४]

पंचमी को 'रतवारा' 'मडंई' को षष्टि दिन,
वालमीक आश्रम है बलवा को जानिये ।
सातम मुकाम भारी जहं रमे पिया-प्यारी,
'कंचन सुवन' जाको वेद में बखानिये ॥

आठम के दिन चली, "हीरेश्वर" कष्ट स्थली,
वन मध्य वसे भलि दुःख नहीं आनिये ॥
भारी वन छोडकर "धनुषा" में प्रेम भर,
देखी शिव धनु सियराम रूप मानिये ॥

[५]

"सतोखर' नौमि दिन सप्त ऋषि प्रेम पीन,
जहं बसि नेम लीन नाम रूप ध्यानिये ।
'हरुसाहा' दशमी को 'बिमला' को स्नान करि,
एकादशी 'करुणा' में रामसर जानिये ॥
द्वादशी 'कल्याण' जाय, सीताराम प्रेम पाय,
आश्रम 'विसौल' विश्वामित्र को वखानिये ।
मिथिला सुधाम आय 'मथुरा' ने कह्यो गाय,
लघु दास जानि मन दोष नाहि आनिये ॥

[६]

❀ निज नामार्थ ❀

म- मन मोहन है सिय जन्म मिथिला सुभूमि,
जहं बाल केलि रची राम प्रिया आयके ।
थु-थुक सदा वाहि मुख मिथिला सुयश जौन,
वेद शास्त्र ख्यात नहीं गावे कभूचाय के ॥
रा-रामसिया मुख नामजपे सदा आठोंयाम,
रहे नित्य सिया धाम मुठठी चूरा खायके ।

दास-दासन को दास बनि, सुख दुःख सम गुनि,
रस रूप बने मस्त सिया गुण गायके ॥

[७]

म-मकार को अर्थ जीव, स्वामि राम सेवा लीन,
मोह ममता से हीन ज्ञानानन्द मानिये।
थु-थुकार को अर्थ थूक प्रेम युत निरन्तर
जपे नहीं सियाराम वाके मुख ठानिये ॥
रा-राकार को अर्थ राम ईश सुख मोद धाम
परम विभूति गुण सिंधु शुद्ध जानिये।
दास-दास अर्थ सेवक है जानो मोहि रामदास
अनादि को और बात मन नाहीं आनिये ॥

[८]

आदि में मकार जोई मरि मरि जन्म लेत,
मध्यहि 'थु' कार थिर रहे नही पावभर।
अन्त में 'र' कार दीर्घ इष्ट औ आचार्य रूप,
शरणमें आवे सोई मोद ही को जानो घर ॥
याहि हेतु गुरुदेव भेद लहि अच्छर को,
स्वच्छ वर नाम मम "मथुरा-सु-दास" धर।
सियजू चरण खास दास परि हरै आश,
सहज प्रकाश रूप सेवा सु अधिक कर ॥

[९]

❀ श्री अयोध्या-महिमा ❀

मिथिला-अवध और चित्रकूट तीनों भूमि,
सीतारामजी की सदा सुखद विलासी है।
तामें अवध पुर निज धाम रघुनाथ जी को
जाके हम दास नित करत खवासी हैं॥
सरयू है सुधा सम शुचि रामघाट तहौं,
कीन्हें अस्नान ध्यान मिटे यम फांसी है।
सिय महाराणीजू को "नेहनिधि" भृत्य लघु;
औगुन अनेक तऊ अयोध्या-निवासी है॥

[१०]

धामही सों काम, एक नाम लेत सियाजू को,
मूरख विमुख लोग, जानत उदासी है।
स्वामी रामभद्रमम, स्वामिनी सियाजू सदा,
मन वच कर्म प्रेम भक्ति के उदासी हैं।
रसिकों के दास, एक आशा श्रीकिशोरीजू की,
दास मथुरा को यही नेम सुखराशी है।
रामदूत महावीर, रक्षक हमारे नित्य,
अवगुण अनेक तऊ अयोध्या निवासी हैं।

[११]

अयोध्या सु धाम नीको, वास आठोयाम नीको,
सीता राम नाम नीको, मूल वेद छन्द को।
रामघाट स्नान नीको, सरयू जल पान नीको,
वीर हनुमान नीको रत्तक है मन्द को ॥
सीताराम कुण्डनीको, सन्तन को झुण्ड नीको,
गौर श्याम रंग नीको अंग युग चन्द को।
नील पीत पट नीको, सरयू को तट नीको,
जनक दुलारी नीकी नीको रघुनन्द है ॥

—दोहा—

रेफ अर्थ दशरथ सुवन, जनक कुमारि अकार।
दीर्घाकार गुरुदेव हैं, तीनों वरण विचार ॥३॥
पिंगल-काव्य कला सबै, श्रेष्ट चतुरता हीन।
सब गुण गत मम बुद्धि पै, मंद ढीठता कीन ॥४॥
ताको सब सज्जन सुमति, सुनहि बाल इव बैन।
राम नाम भूषित लखी, मानहि उर अति चैन ॥५॥

इति श्री सीतारामीय श्री मथुरा दासजी महाराज
प्रणीत "विनय-शतक" परिशिष्ट

—समाप्तम्—

—दोहा—

'मथुरा' मोहे जगत में, ते रोये बहुकाल ।
ताते दिल से चेतिके, भजिले दीन दयाल ॥
'मथुरा' देखे अन्य को, तो भी भूले ख्याल ।
मान-बडाई में फंसे, तिनके बुरे हवाल ॥
'मथुरा' भले बटोर ले, अन-जन-धन-बहु हाथ ।
अन्त और के कामको, कौडी चले न साथ ॥
मेरा-मेरा करत ही, बीते जनम अनेक ।
'मथुरा' यह तन छूटते, मेरा रहा न एक ॥
'मथुरा' अन धन जगत का, अन्त न आवे काम ।
सुख होवे पर लोकमें, भजले सीताराम ॥

श्रीसीतारामीय श्रीमथुरादास जी महाराज प्रणीत
"मनप्रबोधमाला" से